इकाई 25 उदारवादी जनतंत्र

इकाई की रूपरेखा

25.0 उद्देश्य

यह इस खंड की पहली इकाई है। इसमें प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति और 1929 के आर्थिक संकट के बीच की अवधि की विशेषता बताई गई है। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप :

- इस अवधि में ब्रिटेन, फ्रांस, और जर्मनी जैसे देशों में नई शासन व्यवस्थाओं की प्रकृति को रेखांकित कर सकेंगे,
- इस युग में सम्पूर्ण यूरोप में व्यापत संकट की प्रकृति का विवेचन कर सकेंगे,
- 1929 की आर्थिक मंदी के कारकों की चर्चा कर सकेंगे, और
- यह जान सकेंगे कि 1920 के दशक में होने वाली गतिविधियों ने किस प्रकार 1930 के दशक और उसके बाद घटने वाली राजनैतिक घटनाओं को प्रभावित किया।

25.1 प्रस्तावना

19वीं शताब्दी और 1920 के दशक का अध्ययन और तुलना करने पर आप इन दोनों कालों में आधारभूत परिवर्तन पाएंगे। इसका कारण यह है कि प्रथम विश्व युद्ध और इसके बाद अर्थव्यवस्था और कूटनीतिक संबंधों में आए बदलावों ने बीसवीं सदी के यूरोप को पूरी तरह बदल दिया। इस इकाई में 1920 के दशक में यूरोप में हुए परिवर्तन की प्रकृति और बाद के इतिहास पर पड़ने वाले इसके प्रभाव का विवेचन किया गया है। इसमें ब्रिटेन, फ्रांस और जर्मनी की उदार जनतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं की प्रकृति पर विचार किया गया है। इसमें आपको अर्थव्यवस्था और राजनीति में आए उस संकट से भी परिचित कराया गया है जिसके कारण यूरोप की सारी प्रमुख घटनाएं प्रभावित हुईं।

25.2 पृष्ठभूमि

इतिहासकार और आलोचक एरिक हॉब्सबॉम ने 1914-1945 के बीच के अवधि को 30 वर्षीय युद्ध का काल कहा था। हॉब्सबॉम प्रथम विश्व युद्ध के बाद यूरोप के उस गहराते संकट की बात कर रहे थे जिसके

कारण फासीवाद का जन्म हुआ और इसकी परिणति द्वितीय विश्व युद्ध में हुई। दोनों विश्व युद्धों के बीच विभिन्न शासन व्यवस्थाओं ने इस संकट से उबरने का प्रयास किया; कई प्रकार की व्यवस्थाएं सामने आईं जिसमें वामपंथी क्रांति से लेकर दक्षिण पंथी फासीवाद तक शामिल था।

उदारवादी जनतंत्र की क्या स्थिति थी ? प्रथम विश्व युद्ध के बाद व्याप्त संकट के बीच से उदारवादी जनतंत्र का जन्म हुआ। इसके लिए कई कारक उत्तरदायी थे। युद्ध की क्रूरता, भीषणता और पूरे यूरोप के अस्त व्यस्त हो जाने, अभाव और लोगों के विस्थापित होने के कारण यूरोप की जनता परिवर्तन के लिए बेचैन हो उठी जिसकी परिणति रूस की क्रांति और जर्मनी और हंगरी की असफल क्रांतियों में हुई। प्रमुख उदारवादी जनतंत्रों, इंगलैड और फ्रांस, में उदारवादी जनतांत्रिक राजनीति का पुराना प्रारूप मजूदरों के आंदोलनों से टकराया जो सामाजिक व्यवस्था को बदलने का प्रयास कर रहे थे। इसी दौरान स्त्रियों ने भी मताधिकार के लिए आवाज उठाई। 1929 के आर्थिक संकट और स्टॉक मार्केट में आई गिरावट के कारण उदारवादी जनतंत्र पर दबाव और भी बढ़ गया।

जर्मनी में वाईमार गणतंत्र प्रमुख उदारवादी जनतांत्रिक प्रयोग था। प्रथम विश्वयुद्ध में जर्मनी की हार के बाद वाईमार गणतंत्र की स्थापना हुई जिसमें पहली बार उदारवादी जनतन्त्र के तहत वयस्क मताधिकार को लागू करने का प्रयास किया गया। हालांकि शुरुआत से ही जर्मनी में वाईमार शासन संकटग्रस्त रहा परंतु इसने दर्शन और राजनीति के क्षेत्र में कुछ नई बहसों की शुरुआत की और एक नया सांस्कृतिक अनुभव हुआ जिसके कारण 1920 के दशक में बर्लिन यूरोप की सांस्कृतिक राजधानी बन गया।

अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर फ्रांस और इंगलैंड की उदारवादी जनतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं ने जर्मनी और रूसी क्रांति से उत्पन्न खतरे का सामना करने के लिए अलग-अलग रास्ता अपनाया और नीतियां अख्तियार की। जर्मनी के मामले में फ्रांस ने आक्रामक नीति अपनाई और मध्य और पूर्वी यूरोप के राज्यों से सुरक्षा संधि की नीति अपनाकर जर्मनी को चारों ओर से घेरने की कोशिश की। यूरोप और पूरे विश्व में चल रहे परिवर्तनमूलक आंदोलन और रूसी क्रांति ने खासतौर पर उदारवादी जनतंत्रों के सामने समस्याएं पैदा कीं। अंग्रेजों ने रूसी क्रांति के खिलाफ आक्रामक रूख अख्तियार किया क्योंकि वे इसे यूरोप की सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा मानते थे।

25.3 वर्साय और उसके बाद

वर्साय संधि पर विचार विमर्श करने से दो युद्धों के बीच उदारवादी जनतांत्रिक अनुभवों को जानने में मदद मिलेगी। पिछले विचार-विमर्श से हम जान चुके हैं कि वर्साय सम्मेलन विजयी मित्र राष्ट्रों का सम्मेलन था जो जर्मनी से उसकी हार की ज्यादा से ज्यादा कीमत वसूलना चाहते थे। इस सम्मेलन में तीन प्रमुख व्यक्ति क्रियाशील थे : संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति वुडरो विलसन, फ्रांस के ज्योर्ज्स क्लिमान्सो और ब्रिटेन के लॉयड जॉर्ज। मुख्य विवाद विलसन के युद्धोतर व्यवस्था संबंधी उदारवादी दृष्टिकोण ओर क्लिमान्सो के जर्मनी पर कठोर आघात और ज्यादा से ज्यादा शोषण संबंधी राष्ट्रवादी मांग के बीच था। क्लिमान्सो के लिए फ्रांस की सुरक्षा सबसे महत्वपूर्ण थी और उसकी सोच इसी से प्रभावित थी क्योंकि फ्रांस जर्मनी से जमीन के रास्ते जुड़ा हुआ था और उसे युद्ध में सबसे ज्यादा नुकसान उठाना पड़ा था। इसलिए वह हमेशा हमेशा के लिए जर्मनी की ताकत को तोड़ देना चाहता था।

दूसरी तरफ विलसन की सोच और दृष्टि व्यापक थी। उसके 14 सूत्री योजना में आत्मनिर्णय, प्रभुसत्ता और न्याय के आदर्श शामिल थे। विलसन के आदर्श में आधुनिक राज्य प्रणाली को स्थायित्व देने का कार्य शामिल था (जो सतरहवीं शताब्दी की वेस्टफोलिया की संधि पर आधारित था)। यह स्थायित्व उन्नीसवीं शताब्दी के दौरान यूरोप के विभिन्न देशों के बीच हुए संघर्ष से बाधित हुआ जिसकी परिणति प्रथम विश्व युद्ध में हुई। अमेरिकी इतिहासकार चार्ल्स मेयर ने बताया कि विलसन के आदर्शों और रूसी क्रांति के नेता लेनिन (जो वर्साय में शामिल नहीं थे) ने आधुनिक राज्य व्यवस्था के नए रास्ते अलग-अलग तरीके से दिखाए। एक तरफ विलसन उदारवादी कार्यक्रमों की वकालत करते हुए विश्व व्यवस्था, विश्व सरकार (लीग ऑफ नेशन्स) की बात कर रहे थे, दूसरी तरफ लेनिन विश्व क्रांति के द्वारा पुरानी राज्य व्यवस्था को पूरी तरह बदल देना चाहते थे। इसके अलावा लेनिन ने गैर यूरोपीय लोगों के आत्मसंकल्प का आह्वान कर अपना

अन्तरराष्ट्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत किया और वेस्टफेलिया व्यवस्था के आधार पर ही प्रश्न चिह्न लगा दिया जिसके तहत यूरोपीय ताकतों को दूसरों की तुलना में विशेषाधिकार प्राप्त थे। कुछ भी हो विलसन और लेनिन का अंतरराष्ट्रीयवाद वर्साय के समय के आस-पास ही उभरा और बीसवीं शताब्दी के दौरान इन विचारों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

वर्साय सम्मेलन में क्लिमान्सो की कठोर नीतियों का ही वर्चस्व रहा। जर्मनी पर कई प्रकार के प्रतिबंध लगाए गए। जर्मनी की सैन्य शक्ति क्षीण कर दी गई। उसकी सेना की संख्या घटाकर 1 लाख कर दी गई जिसमें लोगों को स्वैच्छिक सेवा करने की, पुराने सेना अधिकारियों को समाप्त करने और टैंक या भारी अस्त्र-शस्त्र रखने पर प्रतिबंध लगाया गया। उनकी सैन्य शक्ति में भारी कटौती की गई और पनडुब्बी कार्यक्रम को समाप्त कर दिया गया। जर्मनी से उसके सभी उपनिवेश छीन लिए गए जो लगभग 1 लाख वर्ग मील में फैले हुए थे। इसके साथ-साथ अलसास और लॉरेन प्रांतों को भी वापस ले लिया गया। 1871 में जर्मनी ने यह फ्रांस से ले लिया था। जर्मनी ने 15 वर्षों के लिए सार की कोयला खानों को फ्रांस के हवाले कर दिया और इस क्षेत्र पर लीग ऑफ नेशन्स का शासन स्थापित हो गया।

संधि प्रस्ताव की शर्तों में जो कठोरता थी और विजेताओं ने जर्मनी के साथ जैसा व्यवहार किया था तथा उपनिवेशों को आजादी न देने के उनके विचार से लेनिन और बोलशेविक धारणाओं को बल मिला कि प्रथम विश्व युद्ध मुख्य रूप से साम्राज्यवादी शक्तियों के बीच दुनिया को आपस में फिर से बांटने के लिए लड़ा गया एक युद्ध था। इस दृष्टि से विलसन के उदारवादी अन्तरराष्ट्रीयतावाद के कार्यक्रम को प्रचारित करने के बावजूद वर्साय की संधि के बाद पश्चिमी उदारवाद के प्रति उपनिवेशों में रहने वाले लोगों का मोह भंग हुआ। राष्ट्रवादी बोलशेविक रूस की ओर आशा की नजर से देखने लगे। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वर्साय सम्मेलन प्रथम विश्व युद्ध से पैदा हुई स्थिति से निपटने में असफल रहा। जैसा कि कार्ल पोलानी ने अपनी श्रेष्ठ रचना 'द ग्रेट ट्रान्सफोर्मेशन' में लिखा है कि प्रथम विश्व युद्ध ने उन्नीसवीं शताब्दी के यूरोप के आधारों को नष्ट कर दिया जिससे यूरोप में संकट की स्थिति छा गई। वर्साय सम्मेलन ने इस संकट को और भी गहरा कर दिया जिसकी परिणति द्वितीय विश्व युद्ध की त्रासदी के रूप में हुई।

25.4 वाईमार गणतंत्र और उदारवादी जनतंत्र

प्रथम विश्व युद्ध के बाद जर्मनी में स्थापित राजनैतिक व्यवस्था को वाईमार गणतंत्र के नाम से जाना जाता है जो 1913 में नाजी शासन की स्थापना तक कायम रही। इस गणतंत्र का संविधान जर्मनी के वाईमार नामक स्थान में बनाया गया था। इसलिए इसे वाईमार गणतंत्र के नाम से जाना जाता है। इस गणतंत्र का जन्म पराजय की पृष्ठभूमि में हुआ था। इसके अलावा उस समय वहां के क्रांतिकारी समाजवादी रूस के बोलशेविकों का अनुसरण कर रहे थे। वाईमार की स्थापना के प्रारंभिक दिनों में बर्लिन में सैनिकों ने प्रमुख क्रांतिकारी समाजवादी रोज़ा लक्जेमबॅर्ग और कार्ल लीबनेख्त की हत्या कर दी। नाजियों के उदय होने तक वर्साय काल में क्रांतिकारी समाजवादियों, जो बाद में साम्यवादी दल में परिणत हो गया था, का खतरा बराबर बना रहा।

यह गणतंत्र वयस्क मताधिकार, औपचारिक राजनैतिक स्वतंत्रता और एक जनतांत्रिक संसद के सिद्धांतों पर आधारित था जो यूरोपीय इतिहास में एक महत्वपूर्ण कदम था। पुराने चुनाव संबंधी नियमों को समाप्त कर दिया गया जो सुधारवादी सामाजिक जनतंत्रियों के विकास में रोड़ा थे और इस प्रकार इस दल को विशेष महत्व मिला। मुख्य रूप से सामाजिक जनतांत्रिक प्रभाव में वाईमार में व्यक्तिगत स्वतंत्रताओं और सामाजिक नीति के संबंध में नए कानून बने।

हालांकि जर्मन सामाजिक जनतंत्री भी अपने बल पर सरकार बनाने में समर्थ नहीं थे। इस स्थिति में एक मिली जुली संस्कृति का जन्म हुआ जिसमें मध्यमार्गी और दक्षिणपंथी दलों को उनकी ताकत से ज्यादा महत्व मिला। इस खास स्थिति में सबसे ज्यादा महत्व पीपुल्स पार्टी और उनके नेता गुस्तव स्त्रेजमान को मिला। 1924 के चुनाव में चांसलर बनने के बाद स्त्रेजमान 1929 में अपनी मृत्यु तक देश के सबसे महत्वपूर्ण राजनैतिक नेता बने रहे। उनको इतना महत्वपूर्ण माना गया कि जर्मन राजनीति में इस युग को स्त्रेजमान युग के नाम से जाना जाता है।

स्त्रेजमान का उद्देश्य वाईमार झंडे के तहत जर्मन संभ्रांतवर्गों के कुछ हिस्सों को एकत्र करना और साम्यवादियों और नाजियों की ओर से आनेवाली सुधारवादी चुनौतियों से संघर्ष करना था। अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर स्त्रेजमान वर्साय के जुए को अपने कंधे से उतार फेंकना चाहते थे और एक बार फिर जर्मनी को विश्व की एक ताकत के रूप में उभारना चाहते थे। वर्साय की संधि में जर्मनी की खोई हुई प्रतिष्ठा को पुन: प्राप्त करने के लिए स्त्रेजमान ने निम्नलिखित कार्य किए :

- उन्होंने फ्रांस द्वारा जर्मनी की रूर घाटी के आधिपत्य का जम कर विरोध किया।
- उन्होंने जर्मनी के आर्थिक पुनर्निर्माण के लिए 1924 की डावेस योजना को राईखस्टाग (जर्मन संसद) से पारित करवाया।
- उन्होंने 1926 में लीग ऑफ नेशन्स में जर्मनी को शामिल करवाया, और
- उन्होंने कई प्रकार के आर्थिक सुधारों के द्वारा जर्मन उद्योग को आगे बढ़ाया तथा भुगतान संकट को दूर करने के लिए निर्यात को प्रोत्साहित किया और इस प्रकार जर्मनी को आर्थिक दृष्टि से आगे बढ़ाने का प्रयास किया। स्त्रेजमान ने जर्मन संभ्रांत वर्ग के विभिन्न गुटों के परस्पर विरोधी हितों के बीच सावधानीपूर्वक संतुलन स्थापित कर पुरानी शैली के अनुदार राष्ट्रवाद को बचाने की कोशिश की और इसे वाईमार के उदारवादी संविधान में शामिल किया।

चित्र 1: गुस्ताव स्त्रोज़मान

1929 के आर्थिक संकट के बोझ से वाईमार प्रयोग ढह गया। अर्थव्यवस्था के ढहने के साथ-साथ उद्योग और श्रमिकों तथा जर्मनी के पूंजीपतियों के विभिन्न गुटों के बीच का नाजुक सामाजिक समझौता टूट गया। संभ्रांत वर्ग ने समझौते की संस्कृति से अपने हाथ खींच लिए जो किसी भी जनतांत्रिक राजनीति का हिस्सा होता है और उन्हें इस संकट से उबरने की एक मात्र आशा की किरण नाजी सुधारवादी दक्षिणपंथी कार्यक्रम में नजर आई। इतिहासकार डेविड अब्राहम ने अपनी पुस्तक *द कोलैप्स ऑफ द वाईमार रिपब्लिक* में इस बात की विस्तार से चर्चा की है कि वाईमार में संभ्रांतों के बीच समझौते का एक स्वरूप था और जब संभ्रांत वर्ग किसी दूसरे समाधान की ओर मुड़े और किसी भी प्रकार के क्रांतिकारी परिवर्तन को दूर रखने का प्रयत्न किया तो उन्होंने नाजी को ही विकल्प के रूप में चुना।

वाईमार के पतन के बाद इंगलैंड और फ्रांस के उदारवादी जनतंत्र के अनुभवों के प्ररिप्रेक्ष्य में जर्मन 'खासियत' या जर्मनी के अनोखेपन की बातचीत की जाने लगी। यहां जर्मनी के अधूरे उदारवादी रूपांतरण को जर्मन खासियत (जो जर्मन में *ओन्डरवेग*) के रूप में देखा जाने लगा क्योंकि जर्मन उद्योगपतियों का अनुदार जंकरों (एक कृषीय भूमिपति वर्ग जिसका उदय पर्शिया में हुआ था) के साथ गठजोड़ था जो पूर्ण परिवर्तन नहीं चाहते थे। इस प्रकार जर्मनी का 'पिछड़ापन' उसे गैर जनतांत्रिक शासन की ओर ले गया। कई समकालीन इतिहासकारों ने 'खासियत' तर्क की जमकर आलोचना की। (देखिए एले ऐंड ब्लैकबॉर्न, *द पिक्यूलियारिटीज ऑफ जर्मन हिस्ट्री*) और उन्होंने उदारवाद के लिए फ्रांस और इंगलैंड को आदर्श मानदंड बनाने की समस्याओं की ओर ध्यान दिलाया। चाहे इस पर बहस जो भी हुई हो, पर यह स्पष्ट है कि वाइमार शासन व्यवस्था को एक बिलकुल नई प्रकार की नाजीवादी प्रतिक्रियावादी राजनीति में रूपांतरित होना था जिसका पूरे यूरोप पर दुष्प्रभाव पड़ना था।

अपने पतन के बावजूद वाईमार युग बीसवीं शताब्दी के यूरोप में प्रेरणास्पद प्रयोगों का सर्वोत्तम उदाहरण बन कर सामने आया। जैसा कि एक जर्मन इतिहासकार डेल्टेव पेकर्ट ने बताया है कि सार्वजनिक गृह निर्माण और स्वास्थ्य के क्षेत्र में वाईमार के सीमित सामाजिक प्रयोगों ने युद्धोतर पुनर्निर्माण में एक नमूने का काम

किया। बौद्धिक क्षेत्र में निस्संदेह वाईमार गणतंत्र द्वारा दी गई स्वतंत्रताओं द्वारा आलोचनात्मक ऊर्जा का संचार हुआ। दर्शन के क्षेत्र में वाईमार युग में मार्टिन हेडेगर ज्योर्ज़ लूकाच (जो स्वयं हंगरीवासी था), कार्ल मैनहिम और कई अन्य लेखकों की उत्कृष्ट रचनाएं शामिल थीं। फ्रैंकफर्ट सामाजिक अनुसंधान विद्यापीठ की स्थापना से बीसवीं शताब्दी के कई सर्वोत्कृष्ट बुद्धिजीवियों को एक मंच पर आने का मौका मिला, इनमें थ्यूडोर एडोरनो, मैक्स हौरखेमर, हरबर्ट मार्केज, एरिक फ्रॉर्म प्रमुख हैं। आलोचक वाल्टर बेंजामिन ने जर्मन त्रासदी पर महत्वपूर्ण पुस्तक लिखी और एवरिन पिसकेटर और बरतॉल्त ब्रेख्त ने रंगमंच के क्षेत्र में अभिनव प्रयोग किए। आलोचक सीगफ्रेड क्रेसर ने सिनेमा संबंधी अपने लेखों में फिल्म के दर्शकों की भूमिका के बारे में लिखा। खुद सिनेमा के क्षेत्र में फ्रिट्ज लैंग की फिल्मों ने विश्व सिनेमा में जर्मन सिनेमा को एक नई अभिव्यक्ति दी। अन्य क्षेत्रों में, बहास स्थापत्य विद्यापीठ (बहास स्कूल ऑफ आर्किटेक्चर) की स्थापना बर्लिन में हुई जहां इस्पात और शीशे का इमारत निर्माण में उपयोग कर आधुनिक डिजाइन तैयार करने की विधियां निकाली गई। नाजी शासन स्थापित होने के बाद बाल्टर ग्रोपियस और मियेस वैन डेर रोह जैसे स्थापत्यकार संयुक्त राज्य अमेरिका चले गए और वहां विश्व ख्याति प्राप्त की। ललितकलाओं और साहित्य के क्षेत्र में इस युग में नूतन और अभिनव प्रयोग हुए और बर्लिन यूरोप के बेहतरीन आधुनिक चित्रकारों और लेखकों का गढ़ बन गया। लेखक वाल्टर बेंजामिन ने पेरिस को उन्नीसवीं शताब्दी की राजधानी की संज्ञा दी थी क्योंकि उसने बड़े-बड़े साहित्यकारों को आकृष्ट किया और उन्होंने नए प्रयोग किए। इसी रूप में वाईमार बर्लिन 1920 के दशक की राजधानी थी जिसकी छाप गणतंत्र के पतन के काफी देर बाद तक बनी रही।

बोध प्रश्न 1

1) लेनिन और विलसन के आधुनिक राज्य व्यवस्था संबंधी दृष्टिकोण में क्या अन्तर था ?

....

....

....

....

....

....

2) वर्साय की संधि की प्रमुख विशेषताओं पर पांच पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

....

3) वाईमार गणतंत्र का पतन क्यों हुआ ?

....

....

....

....

....

....

25.5 सामाजिक संघर्ष और स्थायित्व की खोज : ब्रिटेन और फ्रांस

जर्मनी के वाईमार गणतंत्र के अलावा फ्रांस और ब्रिटेन दो प्रमुख जनतांत्रिक शासन व्यवस्थाएं थीं। इन दोनों शासन व्यवस्थाओं में कई सामानताएं थीं परंतु वे कई मायनों में एक दूसरे से अलग भी थीं। ब्रिटेन एक आर्थिक महाशक्ति था परंतु बीसवीं शताब्दी के आरंभ में उसकी सर्वोच्च आर्थिक हैसियत लुप्त हो गई। दूसरी ओर युद्धोतर काल में फ्रांस अपनी आर्थिक समृद्धि को कायम रखने में सफल रहा। आइए, अर्थव्यवस्था और राजनीति के क्षेत्र में इन दोनों देशों में होने वाले विकासों का अध्ययन किया जाए।

25.5.1 ब्रिटेन

युद्ध के बाद विश्व अर्थव्यवस्था पर ब्रिटेन का वर्चस्व समाप्त होने लगा। ब्रिटेन का वर्चस्व उन्नीसवीं शताब्दी के मुक्त-व्यापार साम्राज्यवाद पर आधारित था जो इस शताब्दी के अन्तिम दशक में ही लड़खड़ाने लगा था। 1920 के दशक में ब्रिटेन धीरे-धीरे आर्थिक क्षेत्र में संयुक्त राज्य अमेरिका पर निर्भर हो गया और उसके आगे बढ़ने के लिए रास्ता छोड़ दिया। युद्ध के दौरान संयुक्त राज्य अमेरिका पर ब्रिटेन की निर्भरता बढ़ी क्योंकि अब ब्रिटेन अकेले दम पर युद्ध करने की स्थिति में नहीं था। हालांकि 1924 में राज्य के वित्तीय हस्तक्षेप के कारण ब्रिटेन की आर्थिक हालत में थोड़ा सुधार आया। ऑटोमोबाइल और जहाजरानी जैसे उद्यागों को फिर शुरू किया गया और 1925 तक विंस्टन चर्चिल पौंड और डॉलर की समतुल्यता को युद्ध पूर्व स्थिति में ले आया और ब्रिटेन फिर से स्वर्ण मानदंड की ओर लौट आया। हालांकि इसके बावजूद ब्रिटेन अपनी पुरानी हैसियत नहीं प्राप्त कर सका। उद्योग युद्ध पूर्व स्थिति में कभी नहीं लौट पाए और विश्व व्यापार में ब्रिटेन को लगातार संयुक्त राज्य अमेरिका, जर्मनी और जापान की चुनौतियों का सामना करना पड़ा।

इस दीर्घकालीन पतन की प्रक्रिया का असर राजनैतिक परिदृश्य पर पड़ा। लिबरल पार्टी, जिनकी राजनीति उन्नीसवीं शताब्दी के मुक्त व्यापार सिद्धांतों पर आधारित थी, का स्थान लेबर पार्टी लेने लगी। कामगार वर्ग द्वारा सामाजिक नागरिकता की बढ़ती मांगों को शामिल करना नई चुनौती के रूप में सामने आया। इसके कारण उन्नीसवीं शताब्दी की सामाजिक आर्थिक व्यवस्था में बदलाव की जरूरत महसूस की गई। मजदूर आंदोलन की प्रमुख प्रवक्ता लेबर पार्टी को इस नई स्थिति का सबसे ज्यादा लाभ मिला। 1924 और 1929 में लेबर और लिबरल पार्टी की साझा सरकारें बनीं जिसमें लेबर पार्टी का वर्चस्व रहा।

1920 के दशक में ब्रिटेन में मजदूरों ने संघर्ष किया और लंबी हड़तालें की जिसने पिछले 50 वर्षों की सामाजिक शांति को भंग किया। इसकी शुरुआत 1920 में खान मजदूरों की हड़ताल से हुई जिसमें लाखों मजूदर शामिल हुए और इसने लगभग एक आम हड़ताल का रूप ले लिया। श्रमिक आंदोलनों में खान में काम करने वाले मजदूर सबसे ज्यादा आक्रामक थे और उन्होंने हमेशा मजदूर आंदोलन के लिए उत्प्रेरक का काम किया। मई 1926 में खान मजदूरों ने फिर से हड़ताल की और इस बार आम हड़ताल हुई। लोहे और इस्पात मजदूर, भारी उद्योग की मुद्रण शाखाएं, इमारत निर्माण और अन्य उद्योगों के कई हिस्सों के मज़दूरों ने काम करना बंद कर दिया। उस समय की कंजरवेटिव सरकार ने हड़ताल तोड़ने के लिए सेना भेजी जिससे स्थिति और बिगड़ गई। अखबार बंद कर दिए गए और सरकार ने मजदूरों का जम कर दमन किया। नौ दिनों के बाद ट्रेड यूनियन कांग्रेस ने हड़ताल वापस ले ली। कंजरवेटिव पार्टी ने मजदूर आंदोलन पर प्रहार किया और 1927 में कानून बनाकर हड़तालों पर प्रतिबंध लगा दिया।

श्रमिक आंदोलनों पर कंजरवेटिव पार्टी की अस्थाई जीत के बावजूद यह स्पष्ट था कि सामाजिक शांति, जो उन्नीसवीं शताब्दी के ब्रिटिश उदारवाद का लक्षण था, का युग समाप्त हो चुका था। विश्व अर्थव्यवस्था में ब्रिटिश वर्चस्व स्थापित करने और उपनिवेश कायम करने के लिए जिन मजदूरों की निष्ठा खरीदी गई थी वे अब राज्य के साथ नई सामाजिक व्यवस्था की मांग करने लगे। यहां पॉलेनी की उन्नीसवीं शताब्दी की पुरानी व्यवस्था की टूटने की अवधारणा कुछ हद तक सत्य साबित हुई और ब्रिटेन में लिबरल पार्टी इस परिस्थिति की सबसे पहले शिकार हुई।

25.5.2 फ्रांस

प्रथम विश्व युद्ध के बाद ब्रिटेन की अपेक्षा फ्रांस की आर्थिक स्थिति निस्संदेह तेजी से सुधरी। युद्ध के पहले विश्व अर्थव्यवस्था में फ्रांस कभी भी एक विकसित औद्योगिक देश नहीं था। फ्रांस के सकल राष्ट्रीय उत्पाद

में विदेशी व्यापार का अंशदान बहुत ही सीमित था। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में फ्रांसीसी औद्योगीकरण और कृषि का आधुनिकीकरण निश्चित रूप से तेजी से बढ़ रहा था परंतु इंगलैंड की औद्योगिक क्रांति और संयुक्त राज्य अमेरिका के पुनर्निर्माण से इस विकास की तुलना नहीं की जा सकती।

प्रथम विश्व युद्ध के दौरान युद्ध की जरूरतों को पूरा करने के लिए फ्रांसीसी उद्योगों ने काफी प्रगति की। युद्ध के बाद भी यह प्रगति जारी रही और अलसास और लॉरेन की वापसी से फ्रांस की औद्योगिक क्षमता में उछाल आया। युद्ध के दौरान यह निर्णय लिया गया कि कोयला के बदले जल बिजली ऊर्जा का विकास किया जाएगा। इससे कृषीय क्षेत्रों में भी औद्योगिक विकास हुआ। 1923 के बाद उत्पादक क्षमता में तेजी से वृद्धि हुई। 1925 तक आते-आते औद्योगिक उत्पादन सूचकांक 1919 की तुलना में दोगुना हो गया और भुगतान संतुलन की स्थिति सुधर गई। परंतु समस्याएं बनी रहीं। क्रांति की विरासत के रूप में खाद्य पदार्थों की कीमतें ऊंची थीं और क्रांति के बाद एक संरक्षणवादी कृषि नीति अपनाई गई थी। औद्योगिक उत्पादन में वृद्धि होने के साथ-साथ मजदूरी की दर भी काफी ज्यादा थी (खाद्यान्न मूल्य ज्यादा होने के कारण) और इसके कारण फ्रांसीसी निर्यात का विदेशी बाजार में टिकना मुश्किल था।

1920 के दशक में राजनीति के क्षेत्र में फ्रांसीसी राजनीति वाम-दक्षिण में बंटी हुई थी। यह विशेषता आज भी मौजूद है। 1920 के दशक के आंरभ में ही वामपंथी दलों का तेजी से विकास हुआ। इसमें पुरानी सोशलिस्ट पार्टी के अलावा कम्युनिस्ट पार्टी भी शामिल थी। 1924 के चुनाव में पहली बार वामपंथियों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई जिसमें कंजरवेटिव प्रधानमंत्री रेमंड प्वाइनकेयर के साथ-साथ दक्षिणपंथी राष्ट्रपति मिलरैंड चुनाव हार गए। फ्रांस में पहली बार वामपंथी मोर्चा (इसमें कम्युनिस्ट की भागीदारी नहीं थी) सत्ता में आया। परंतु यूरोप के अन्य सैद्धांतिक विचारों के तरह ही यह मोर्चा भी अस्थाई साबित हुआ और 1924 के चुनाव में प्वाइनकेयर जीत कर वापस आए।

वामपंथियों का मानना था कि फ्रांस की प्रमुख समस्या यह थी कि सत्ता का संकेंद्रण बैंक ऑफ फ्रांस से जुड़े वित्तीय कुलीनतंत्र के पास था। वामपंथियों का यह मानना था कि फ्रांस के 200 प्रमुख परिवार (इसमें 200 प्रमुख शेयर होल्डर शामिल थे) के हाथ में राजनैतिक सत्ता थी। हालांकि 1920 के दशक में फ्रांस में सामाजिक संघर्ष एक सामान्य स्तर पर कायम रहा – ये सारी स्थितियां 1929 के आर्थिक संकट के बाद बदल गईं।

25.6 कूटनीति का संकट

लीग ऑफ नेशन्स विलसन की एक महान अन्तरराष्ट्रीय परियोजना थी जिसके द्वारा वे नए युग की शुरुआत करना चाहते थे। युद्ध के बाद एक अन्तरराष्ट्रीय राज्य व्यवस्था कायम करने के लिए इस लीग ने एक आधार प्रस्तुत किया ताकि यूरोपीय शक्तियों के संघर्ष को रोका जा सके। लीग की प्रमुख परियोजना 'सामूहिक सुरक्षा' थी परंतु यूरोपीय परिदृश्य में इसमें कई प्रकार की मुश्किलें और दिक्कतें थीं। यूरोप के अलग-अलग देश सुरक्षा जरूरतों को अलग-अलग नजरिए से देखते थे। उदाहरण के लिए ब्रिटेन सोवियत रूस को अपना प्रमुख शत्रु मानता था। फ्रांस अपने पड़ोसी राज्य जर्मनी को सबसे बड़ा खतरा मानता था।

कई कारकों के कारण यूरोपीय परिदृश्य जटिल हो गया : जर्मनी की 'समस्या' और वर्साय समझौते की अनसुलझी विरासत; यूरोप में सुरक्षा के लिए फ्रांस की गुहार और रूसी क्रांति का खतरा।

सुरक्षा के प्रति फ्रांसीसी पूर्वाग्रह और जर्मनी समस्या एक दूसरे से संबद्ध थी क्योंकि जर्मनी से हर्जाना प्राप्त करने के फ्रांसीसी दुराग्रह के कारण अक्सर संकट की स्थिति पैदा हो जाती थी। सुरक्षा की खोज में फ्रांस लीग में अपने एजेंडा को आगे बढ़ाने की कोशिश करता था तथा इसके साथ ही साथ जर्मनी की सीमा पर बसे राज्यों से स्वतंत्र संधि का प्रयास भी करता था। लीग में फ्रांसीसी एजेंडा के आने से एक अवरोध पैदा हो जाता था क्योंकि निरस्त्रीकरण के मुद्दे पर फ्रांसीसी दुराग्रह के कारण अंग्रेजों को काफी क्षोभ होता था। इस स्थिति में फ्रांसीसी द्विपक्षीयता की नीति की ओर बढ़े।

इस परिवर्तन के फलस्वरूप 1925 में लोकार्नो संधि की गई। जर्मनी ने पहले भी अनुरोध किया था कि फ्रांस और जर्मनी के बीच एक दूसरे पर आक्रमण न करने की संधि की जाए जिसमें बहुत कुछ ब्रिटेन और बेल्जियम को भी शामिल होना था। इसी अनुरोध के फलस्वरूप लोकार्नो संधि को अंजाम दिया गया। 1925

में अंग्रजों ने इस प्रकार की संधि को स्वीकार किया जिसमें बेल्जियम जर्मन सीमा प्रदेश भी शामिल थे। लोकार्नो संधि का निष्कर्ष इस प्रकार सामने आया : ब्रिटेन भविष्य में जर्मन आक्रमण के खिलाफ बेल्जियम के सीमा प्रदेशों की रक्षा करेगा और पूर्व में फ्रांस पौलेंड और चेकोस्लोवाकिया की रक्षा करेगा। जर्मनी लीग ऑफ नेशन्स में शामिल होगा। लोकार्नो संधियों के बाद 1928 में केलॉग-ब्रियां संधि हुई जिसे पेरिस की संधि के नाम से जाना गया। यह संधि अपने क्षेत्र में सार्वभौम थी और इस पर हस्ताक्षर करने वालों ने अन्तरराष्ट्रीय संबंधों में युद्ध को एक अस्त्र के रूप में अपनाए जाने की भर्त्सना की। अन्त में 65 राज्यों ने इस संधि पर हस्ताक्षर किए।

संधियों की श्रृंखला और गहन कूटनीति से यूरोप में शांति का माहौल कायम हुआ। यह आनेवाली आंधी के पहले की खामोशी थी और यह खामोशी बहुत जल्द ही भंग होने वाली थी।

25.7 आर्थिक संकट

युद्ध के तुरंत बाद यूरोपीय उद्योग में अमेरीकी अनुभवों के आधार पर सुधार किए गए। फोर्ड की नई कार्य पद्धति और नई श्रम व्यवस्था और स्तर के कारण संयुक्त राज्य अमेरिका में उत्पादकता तेजी से बढ़ी। अमेरिका (प्रथम विश्व युद्ध के बाद यह विश्व का प्रमुख राष्ट्र बन गया) की सफलता ने यूरोप के लिए विकास का एक नमूना सामने रखा। लेनिन से लेकर मुसोलिनी जैसे अलग विचारों वाले नेताओं ने भी अमेरिकी कारखाना सुधार और श्रम व्यवस्था की प्रशंसा की।

वस्तुत: जर्मनी से लेकर रूस तक, फ्रांस से लेकर इटली तक, अमेरिकी शैली के सुधार के विभिन्न रूप सामने आए। इन सभी सुधारों को सस्ते अमेरिकी ऋण, मशीनरी, और पूंजीगत माल का समर्थन प्राप्त था। वस्तुत: इस युग में विश्व व्यापार के फिर से गतिशील होने का प्रमुख कारण यह था कि विश्व अर्थव्यवस्था में अमेरिका के ऋणदाताओं ने भारी मात्रा में कर्ज दिया था।

यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि प्रथम विश्व युद्ध के बाद के वर्षों में यूरोप की गतिशीलता लगभग पूर्णत: अमेरिकी ऋण पर अवलंबित थी। इस प्रक्रिया के दौरान अमेरिकी ऋणदाताओं को लगातार अपने निवेश पर मुनाफा होने लगा। उदाहरण के लिए 1920 के दशक में अमेरिका ने जर्मनी को ऋण दिया। यह राशि जर्मनी ने हर्जाने के तौर पर फ्रांस और ब्रिटेन को दे दिया। फ्रांस और ब्रिटेन ने यह पैसा युद्ध के दौरान अमेरिका से लिए गए कर्जों के भुगतान के रूप में किया। विश्व अर्थव्यवस्था मुद्रा आपूर्ति से आप्लावित हो गई जिसमें अधिकांश पैसा अमेरिका का था। इस माहौल में सट्टेबाजी का बाजार गर्म हुआ और सट्टेबाजों ने अपना महत्व बढ़ाना शुरू कर दिया। इस युग में वित्तीय घपलों और कुप्रबंधों का बोलबाला रहा जो दशक का अंत आते-आते अपने चरम सीमा पर पहुंच गया।

वस्तुत: इस संकट का शुरुआत उत्तरी अमेरिका में कृषि मूल्यों में आई तीव्र गिरावट के साथ शुरू हुई। यूरोप में आर्थिक प्रगति होने के साथ-साथ विश्व स्तर पर कृषि अधिशेष भी बढ़ा और उत्तरी अमेरीकी उत्पादकों को मूल्यों में आई तीव्र गिरावट के कारण बहुत नुकसान उठाना पड़ा (इन्होंने युद्ध काल में अपना उत्पादन काफी बढ़ा लिया था)। अमेरीकी कृषि में दिवालियापन शुरू हो गया और खर्चे में काफी कमी आई। अब बहुत जल्द ही स्टॉक मार्केट भी प्रभावित होने वाला था।

अक्टूबर 1929 में घटनाएं करवट लेने लगीं। 24 और 29 अक्टूबर 1929 को तेरह और साढ़े सोलह मिलियन शेयर बेचे गए। इसी महीने अमेरीकी निवेशकों को 40 बिलियन डालर का घाटा लगा जो उस समय की एक बड़ी राशि थी। इस तीव्र गिरावट से दुनिया भर में कृषीय मूल्यों में कमी आने लगी। विश्व अर्थव्यवस्था में कृषि उत्पादों के एक दूसरे से संबंध होने के कारण लाखों प्राथमिक उत्पादक प्रभावित हुए। चीनी, कपास, तम्बाकू, गेहूं, चावल और अन्य कई उत्पादों के दाम में आई गिरावट के कारण इनके निर्यात पर भी प्रभाव पड़ा। बड़े-बड़े बागान और खेत बेकार हो गए और लाखों लोग बेरोजगार हो गए। दुनिया भर में लाखों कामगार लोगों की क्रयशक्ति ध्वस्त हो गई और अन्य वस्तुओं की मांग में भी गिरावट आने लगी। राष्ट्रों के बीच व्यापार कम होने लगा। कारखाने बंद हो गए, मजदूर सड़कों पर आ गए और आय में अस्थिरता आ गई। विश्व अर्थव्यवस्था पर अमेरीकी प्रभाव को सारी दुनिया महसूस करने लगी जैसे ही अमेरीकी बैंकों ने पैसा देना बंद किया वैसे ही विश्व स्तर पर ऋण स्रोत सूख गए (केवल अमेरिकी बैंक ही दीर्घकालीन ऋण देने का जोखिम उठा सके)।

कार्ल मार्क्स जैसे लेखकों ने इस संकट का पूर्वानुमान पहले ही कर लिया था और उन्होंने पूंजीवाद की इस प्रवृत्ति का जिक्र किया था। उन्होंने बताया था कि इसके अव्यवस्थित और अनियोजित स्वरूप के कारण एक खास समय में जरूरत से ज्यादा उत्पादन का संकट पैदा हो जाएगा। वस्तुतः कई लेखकों ने पूंजीवाद के इस जरूरत से ज्यादा उत्पादन की प्रवृत्ति (कम मजदूरी के साथ) का संबंध साम्राज्यवाद के सिद्धांत और घरेलू स्तर पर कम उपयोग के साथ जोड़ा। हालांकि विश्व अर्थव्यवस्था में इसके पहले आई गिरावटों की तुलना में 1929 के आंरभ में आई गिरावट का परिणाम गंभीर साबित हुआ। 1871 की मंदी इस अर्थ में महत्वपूर्ण थी कि इसने विश्व अर्थव्यवस्था में ब्रिटिश वर्चस्व को समाप्त किया परंतु उस समय विश्व स्तर पर मंदी नहीं आई। 1929 की व्यापक मंदी ने विश्व अर्थव्यवस्था की सभी ऊंचाइयों को तोड़ दिया। यह तो होना ही था। 1871 के बाद से विश्व अर्थव्यवस्था तेजी से फैली थी और विश्व के अधिक क्षेत्र इसमें शामिल हो गए थे और वहां मुद्रा व्यवस्था के अधीन आए थे। इस कारण यह संकट अब पूरी दुनिया में फैल गया।

केवल सोवियत संघ ही ऐसा देश था जो इस संकट से बचा रहा 'क्योंकि वहां एक देश में समाजवाद' का निर्माण हो रहा था। सोवियत अर्थव्यवस्था में दो पक्षों को आपस में संबद्ध किया गया था। सबसे पहले ग्रामीण निजी स्वामित्व को समाप्त कर सामूहिक रूप से खेती का अभियान चलाया गया और इससे प्राप्त अधिशेष को उद्योग में लगाया गया। पंचवर्षीय योजना के तहत औद्योगीकरण किया गया। 1928 में पहली पंचवर्षीय योजना शुरू की गई और एक लक्ष्य के तहत काम शुरु किया गया और यह दावा किया गया कि 1932 तक यानी एक साल पहले ही लक्ष्य से ज्यादा की प्राप्ति कर ली गई। रूसी उद्योग को फिर से गठित किया गया और सामूहिक खेती को बढ़ावा दिया गया। हालांकि यह भी जान लेना चाहिए कि इस कृषीय रूपांतरण में बड़े पैमाने पर लोगों की जानें गईं और उत्पादकता में कमी आई। इकाई 28 में इन पक्षों पर विस्तार से विचार किया जाएगा।

सोवियत नियोजन में उत्पादक वस्तुओं की तुलना में भारी उद्योग और इंजीनियरिंग के सामानों के उत्पादन पर विशेष बल दिया गया। आधिकारिक तौर पर इसके परिणाम बहुत ही प्रभावशाली रहे परंतु इसका प्रभाव मिला-जुला था। उत्पादन में वृद्धि जरूर हुई परंतु गुणवत्ता से समझौता करना पड़ा और बड़े पैमाने पर बर्बादी हुई। हालांकि उस समय सोवियत उद्योग का एकतरफा विकास महसूस नहीं किया गया। युद्ध के बाद इसे शिद्दत के साथ महसूस किया गया। सोवियत नियोजन की यह तीव्रता सोवियत नेताओं द्वारा महसूस किए जाने वाले खतरे का परिणाम था। स्टालिन ने सार्वजनिक रूप से यह घोषणा की थी कि यदि सोवियत संघ को पश्चिम के साथ टक्कर लेनी है तो दस वर्षों में उनके स्तर पर पहुँचना होगा वरना वे हमें समाप्त कर देंगे। जिस समय पूंजीवादी विश्व आर्थिक संकट झेल रहा था उस समय किसी भी दृष्टि से सोवियत संघ की स्थिति काफी अच्छी थी। नियोजन के कारण सोवियत संघ मंदी की मार से बचा रहा। हालांकि उस समय सोवियत नियोजन की कमियां सामने नहीं आई थी और विश्व के कई हिस्सों में सुधारवादी सोवियत संघ की ओर आशा की नजर से देख रहे थे।

25.8 1920 के दशक को समझना

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कार्ल पोलोनी ने विचार प्रस्तुत किया था कि प्रथम विश्व युद्ध ने उन्नीसवीं शताब्दी के यूरोप का आधार ध्वस्त कर दिया था। सभी मामलों में आर्थिक संकट ने इस प्रक्रिया को पूरा कर दिया। यह संकट उन्नीसवीं शताब्दी के आर्थिक उदारवाद पर अन्तिम प्रहार था जो आत्मनियंत्रित विश्व बाजार और मुक्त व्यापार व्यवस्था संबंधी ब्रिटिश अवधारणा पर आधारित था। इस संकट के बाद राज्य की भूमिका प्रमुखता पाने लगी। इस रूपांतरण में अर्थशास्त्री जॉन मेनार्ड केन्स की रचनाओं का बहुत प्रभाव पड़ा जिसने यूरोप और अमेरिका में आर्थिक पुनरुत्थान को एक दिशा दिखाई। केन्स ने बताया कि वस्तुओं की मांग में वृद्धि करने के लिए राज्य का हस्तक्षेप जरूरी है। अतः सार्वजनिक कार्य करने, कमजोर उद्योगों को हस्तगत करने और बेरोजगारों को बेरोजगारी भत्ता देने के लिए राज्य को हस्तक्षेप करना होगा। यहीं से बीसवीं शताब्दी के उदारवाद में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया। मुक्त व्यापार और निजी पूंजी के बजाय अब राज्य को मांग बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करनी थी। केन्स का विचार यूरोप और उत्तरी अमेरिका में मध्यमार्गी और वामपंथी राजनीति के लिए सक्रिय विचार के रूप में काम कर रहा था जो ब्रिटेन में लेबर पार्टी से लेकर अमेरिका में रूजवेल्ट के न्यू डील तक में प्रतिबिंबित होता है।

दक्षिणपंथियों ने भी इस संकट की आलोचना की। इनमें से अधिकांश विचार जर्मनी से प्रस्फुटित हुए। ओसवाल्ड स्पेंगलर ने 1918 में अपनी पुस्तक *डिकलाइन ऑफ द वेस्ट* लिखी जिसे 1920 के दशक में काफी पढ़ा गया। इसमें स्पेंगलर ने बताया था कि औद्योगीकरण में लिप्त पश्चिमी सभ्यता बीसवीं शताब्दी में पतन की ओर अग्रसर थी। स्पेंगलर ने *लेबेन्सफिलॉसफी* (जीवन का दर्शन) की जो वैकल्पिक अवधारणा प्रस्तुत की उसमें शास्त्रीय आधुनिकता की तर्कसंगतता पर प्रहार किया गया और 'जीवन' को एक विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया गया। राजनैतिक विचारक कार्ल श्मिट ने 1920 के दशक में संसदीय प्रजातंत्र की आलोचना करते हुए जनमत आधारित तानाशाही की वकालत की। दार्शनिक मार्टीन हेडेगर ने पश्चिमी आधुनिकता की आलोचना की जिसे उन्होंने प्रौद्योगिकी हिंसा और जीवन के खिलाफ एक दर्शन के रूप में परिभाषित किया। कई तरीकों से दक्षिण पंथियों के दर्शन ने 1930 के दशक में नाजी शासन व्यवस्था के लिए आधार का काम किया।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद दक्षिणपंथियों की सफलता क्षणभंगुर समझौतों पर टिकी थी। उन्नीसवीं शताब्दी के उदारवाद पर पहला प्रहार युद्ध ने किया और दूसरा प्रहार 1930 के दशक में समझौतों की समाप्ति के साथ हुआ।

बोध प्रश्न 2

1) प्रथम विश्व युद्ध के बाद फ्रांस और ब्रिटेन की राजनीति और अर्थव्यवस्था की महत्वपूर्ण विशेषताओं की विचेना कीजिए।

....

....

....

....

....

2) 1929 के आर्थिक संकट पर दस पंक्तियां लिखिए।

....

....

....

....

....

25.9 सारांश

इस इकाई में प्रथम विश्व युद्ध की समाप्ति और 1929 की मंदी के बीच के समय पर विचार किया गय है। प्रथम विश्व युद्ध के बाद यूरोप में वैचारिक आधारों पर दक्षिणपंथी, वामपंथी और मध्यमार्गी शासन व्यवस्थाओं का विभाजन एक प्रमुख विशेषता थी। इस इकाई में मुख्य रूप से 'मध्यमार्गी' अर्थात जर्मनी, फ्रांस और ब्रिटेन के जनतांत्रिक शासन व्यवस्थाओं का जिक्र किया गया है। इन तीनों शासन व्यवस्थाओं के सामने एक खास प्रकार की समस्या थी जिनका समाधान उन्हें करना था। वर्साय की संधि के द्वारा जर्मनी पर अपमानजनक शर्तें आरोपित की गई थीं। वाइमार गणतंत्र ने, जो मुख्य रूप से दक्षिणपंथी संगठन था, जर्मनी को युद्ध पूर्व आर्थिक स्थिति तक पहुंचाने का प्रयत्न किया। परंतु यह प्रयोग असफल रहा और इसने नाजीवाद के रूप में एक अति दक्षिणपंथी संगठन का मार्ग प्रशस्त किया। ब्रिटेन मध्यमार्गी वामपंथ पर चला और उदारवादियों के स्थान पर लेबर पार्टी एक प्रमुख राजनैतिक ताकत के रूप में उभरी। फ्रांस ने युद्ध

के बाद अपनी आर्थिक स्थिति मजबूत कर ली और यहां दक्षिणपंथी और वामपंथी विभाजन स्पष्ट रूप से उभरा; वहां साझा सरकारें नहीं बनी बल्कि दोनों ताकतें एक दूसरे का विकल्प बनी रहीं।

इस त्रिपक्षीय वैचारिक विभाजन के अलावा युद्ध के बाद हुए विकास के परिणामस्वरूप यूरोप और समूचे विश्व को अभूतपूर्व आर्थिक संकट ने अपने शिकंजे में ले लिया। युद्ध के बाद की अवधि में होने वाले आर्थिक उछाल, कृषीय उत्पादों का जरूरत से ज्यादा उत्पादन और विश्व अर्थव्यवस्था पर अमेरिका के वर्चस्व ने विश्व पूंजीवाद के लिए अभूतपूर्व संकट पैदा कर दिया। संभवत: सोवियत रूस ही एक ऐसा देश था जो इस विश्व संकट से अप्रभावित रहा।

1920 का दशक यूरोप के इतिहास में उथल-पुथल से परिपूर्ण था। यदि विश्व युद्ध ने उन्नीसवीं शताब्दी के यूरोप का आधार नष्ट कर दिया तो मंदी ने यूरोप के रूपांतरण की प्रक्रिया पूरी कर दी। यूरोप पूरी तरह परिवर्तित हो गया। अगली इकाई में हम दक्षिणपंथी शासन व्यवस्थाओं – कंजरवेटिव पार्टी से लेकर फासी शासन व्यवस्थाओं – की प्रकृति पर विचार करेंगे।

25.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखिए भाग 25.3

2) इस प्रश्न का उत्तर देते समय यह बताइए कि जर्मनी पर किस प्रकार कड़ी शर्तें लगाई गई थीं मसलन, जर्मन सेना की शक्ति कम कर दी गई थी और उसके सारे उपनिवेश छीन लिए गए थे। देखिए भाग 25.3

3) इस प्रश्न का उत्तर देते समय आर्थिक संकट के प्रभाव और वाईमार गणतंत्र द्वारा संभ्रांत वर्ग के समर्थन खोने का जिक्र कर सकते हैं। देखिए भाग 25.4

बोध प्रश्न 2

1) जहां एक ओर ब्रिटिश राजनैतिक व्यवस्था में उदारवादियों के स्थान पर नियंत्रण लेबर पार्टी के हाथ में चला गया वहीं फ्रांस में राजनीतिक व्यवस्था में दक्षिणपंथियों और वामपंथियों के बीच तीखा विभाजन बना रहा। इस प्रश्न का उत्तर देते समय अर्थव्यवस्था और राजनीति के संबंध का भी उल्लेख कीजिए। देखिए उपभाग 25.2.1 और 25.2.2

2) देखिए भाग 25.7 इसमें विशेष रूप से अमेरिका के सर्वोच्च आर्थिक शक्ति के रूप उभरने और विश्व अर्थव्यवस्था पर इसके प्रभाव का उल्लेख कीजिए।